Anusandhanvallari
Vol 2024, No.1
December 2024
ISSN 2229-3388

मुगल शासक शाहजहाँ समकालीन वेशभूषा का आज के युवाओं पर प्रभाव

सरिता कुमारी (शोधार्थिनी), शोध निर्देशिका डॉ शगुफ्ता परवीन

कला विभाग, विषय इतिहास

मंगलायतन विश्वविद्यालय, बेसवां अलीगढ

सारांश, भारत की वेशभूषा युग युगान्तर से भारत के भौगोलिक परिस्थितियों और जलवायु से बराबर प्रभावित रहती है। इसके साथ ही साथ सामाजिक, धार्मिक आदतों और रीति रिवाजों से भी प्रभावित होती है। भारतीय मनुष्य सौन्दर्य के बशीभूत होकर अपनी वेशभूषा का नित्य नया नया आविष्कार करने लगा है, उसकी इस अति अलंकरण की प्रवृति से मनुष्य को विशेष बल प्राप्त भी हुए है। मनुष्य ने अपने व्यक्तित्व को सुन्दर बनाने के लिए विभिन्न युगों में अनेक वस्त्र, आभूषण तथा सौन्दर्य की अन्य चीजों का निर्माण किया। उस समय जो वेशभूषा थी उसमें और आधुनिक युग में केवल बनावट में ही अन्तर था। विभिन्न सामाजिक और धार्मिक वर्गों में जो अत्यधिक कपड़ा पहनने का ढंग था उसमें भी अत्यधिक भिन्नता थी। किसान और गरीब जनता बहुत कम वस्त्र धारण करती थी। मुगलों समकालीन भारतीय जनसामान्य जन की वेशभूषा ने विदेशियों को, विशेष रूप से यूरोपियन यात्रियों को बहुत अधिक प्रभावित किया जो बंगाल, पंजाव और अन्य स्थानों की वेशभूषा बनाने के तरीके की बड़ा प्रशंसा किये है। वस्त्र, आभूषण, श्रृगांर प्रसाधन अलंकरण या सादगी चाहे उसकी कोई भी विशेषता रही हो तत्काल हमारा ध्यान अपनी ओर खीचती है। यह शत–प्रतिशत, नहीं तो यहुत कुछ उसकी अभिरूचियों और सांस्कृतिक उपलब्धियों एवं इसके विस्तृत स्तर का ज्ञान कराती है। वस्त्रों के पहनायवें के आधारों पर मानव की जातिगत, देशगत और वर्गगत विशेषता पूर्ण स्पष्ट हो भी जाती है। इसी के साथ–साथ भारतीय समाज में सन्तों की वेशभूषा की सादगी उनके जीवन के लौकिक पक्ष के प्रति उनकी उदासी और विरक्ति को सूचित करती है। सामन्तों के जीवन में अंलकरण की प्रवृति योग पक्ष के प्रति उनकी आसक्ति का आभास दिलाती है। एक साधारण सा कपड़ा हिन्दू योगी के शरीर को ढकने के लिए काफी माना जाता था। वर्नियर ने शाहजहाँ के काल के हिन्दू विद्वान कविन्द्रचार्य के वस्त्रो के बारे में विस्तार से चर्चा की है। जिससे वह वनारस में मिल चुका था।

मुख्य शब्द, वस्त्र, आभूषण, फैशन, टोपी, कुसुंभी आदि।

प्रस्तावना, मुगलकाल के शासको के वस्त्रों का प्रारूप अकबर के काल में निर्धारित हुआ था और थोड़े परिवर्तनों के साथ यह अन्य मुगल सम्राटों के काल में भी प्रचलित रहा। मुगल काल के शासक लोग नये प्रकार की वेशभूषा के बारे में रूचि रखते थे।[1] नोन्तरेट ने सम्राट अकबर के वस्त्रों के वारे में चर्चा की है कि ''बादशाह सिल्क के कपड़े पहना करते थे जिस पर सुनहला काम किया होता था और नीचे पैर तक कपड़ों से ढका हुआ रहता था। उसके नीचे जूता पहना जाता था। मोती और सोने के जेवरात

पहने जाते थे। फादर रूडोल्फ ने सम्राट अकबर को यह देखा कि मुगल शासक अकबर बहुत ही अच्छे किस्म का सिल्क का कपड़ा पहनता था। वह हिन्दुओं के समान ही धोती को पैर से छूता हुआ पहनता था और मौतियों की चूड़ियां पहना करता था।[2] आइने–ए–अकबरी में ग्यारह प्रकार के कोटों की चर्चा भी की गयी है। तकउवीया, पेशवाज, शाहअजिदा, गदार, फर्गी, चकमन और फरमुल वरसाती कोट हुआ करते थे। पहला चौड़े कपड़े का वनाया जाता था जो ऊनी कपड़े का भी वनता था या मोटे कपड़े का भी होता था। मुगल सम्राट जहाँगीर खास तरह का वस्त्र पहनते थे जिसमें नादिरी तुसशाल, वातू गीरीवान, गुजराती साटन का कावा, चेरा और कमर पर वाँधने के लिए सिल्क का वेल्ट होता था जो सुनहले और सिल्क के तागें का बना हुआ होता था। जहाँगीर फैशन के वस्त्रों को पहनने को वहुत उत्सुक रहता था। फैशन के वस्त्र कीमती मोतियों और हीरों से जड़ित रहते थे और उसकी पगड़ी पर विशेष रूप की सजावट भी रहती थी और अपनी हर ऊगली में अगूठी भी पहनते थे। शाहजहाँ जो बहुत ही विद्वान मुगल शासक था। वह जहाँगीर से भी ज्यादा चमकीले और सजावट किये हुए वस्त्र पहनते थो। शाहजहाँ का वस्त्र ठीक उसी प्रकार का होता था जिस प्रकार का उनके पिता पहनते थे। यद्यपि मूल वस्त्रों में जहाँगीर और शाहजहाँ में कोई अन्तर नही था। मुगल उमरा का वस्त्र मुगल सम्राटों के अनुरूप था। धनी वर्गो के वह लोग वस्त्रों पर काफी पैसा खर्च करते थे। वह प्रतिदिन अपने वस्त्र को बदलते थे कभी–कभी वह दिन में भी वस्त्र बदल दिया करते थे। धनी मुसलमान शलवार, चुस्त पायजामें और चुस्त पतलून पहनते थे।[3] शलवार तीन प्रकार से वनायी जाती थी। चुस्त पायजामें भी लोग कई प्रकार से बनाया करते थे। घरों में लोग कई प्रकार की लुंगियों का इस्तेमाल करते थे। उच्च और मध्यम वार्गो के लोग कमीज पहनते थे। पूरब के रीति रिवाजों के अनुसार पायजामें के ऊपर कमीज लटकती रहती थी। यह आगे खुली हुई होती थी। बंगालियों की कमीज पहुत लम्वी रहती थी। पियरार्ड ने इसे लिखने में अतिश्योक्ति की है यह पैर तक लटकरा हुआ होता था। ठण्ड के मौसम में सर्दी से बचने के लिए कमीज के ऊपर भी एक वंडी पहनी जाती थी। उस वन्डी का बाहरी कपड़ा चेकनुमा या फूलदार सिल्क या सूती हुआ करता था। उसके ऊपर भी एक कपड़ा पहना जाता था, जिसे कावा कहा जाता था। कावा अक्सर घुटने तक ही बनाया जाता था। और इसमें बाँधने के लिए डोरी लगी हुई होती थी, हिन्दू लोग इस डोरी को वायी तरफ बाँधा करते थे और मुसलमान लोग दायी तरफ बाँधा करते थे। धनी वर्गो के लोग अपने कंधो पर बहुत ही अच्छे किस्म के और रंग बिरंगे ऊनी शाल ओढ़ते थे और कुछ लोग अपनी गर्दन में स्कार्फ की तरह ही बाँध लिया करते थे। पुरूष लोग हथियार या कटारी हाथ में लिया करते थे जिसमें सुनहली मुठिया बनी होती थी। धनी वनों के लोग सोने के ब्रेसलेट हाथों में पहनते थे। चार पाँच साल तक के बच्चे नंगे घूमा करते थे। अपनी कमर में वे चाँदी या सोने की चेन लगाये रहते थे और पैरों में घंटियां लगी हुयी होती थी। कीमती धातुओं की चीज ही लोग पहना करते थे। इससे प्रमाणित होता है कि मुगलों समकालीन भारत अत्यधिक सम्पन्न था। काम करने वाले मजदूर कारीगर और खेतों में काम करने वाले मजदूर कमर में सूती लगोटा वाँधते थे। विभिन्न सम्प्रदायों के गरीब लोग एक ही तरह का कपड़ा पहनते थे। गरीब लोग कमर में थोती पहनते

थे जो पाँच गज लम्बा होती थी। अबुल फजल ने लिखा है कि बंगाल के गरीब पुरुष और स्त्रियां प्रायः नंगे ही रहा करते थे और केवल कमर के नीचे कपड़ा पहना करते थे। निजामुद्दीन अहमद ने दक्षिण और गोलकुण्डा के पुरूष और स्त्रियां दोनों को केवल कमर में कपड़ा बाँधते हुए देखा था। यूरोप के अधिकांश यात्रियों ने भी इस विचार की पुष्टि की है। यात्री लोग इस बात की चर्चा नहीं करते है कि जाड़े के मौसम में साधारण लोग रूई से भरा हुआ कोट पहना करते थे जो वर्षों तक चलता था। इकबाल नामा जहाँगीर में इस बात की चर्चा मिलती कि कोट कभी धाये ही नही जाते थे और वह यूंही फट जाते थे।[4]

मुगल कालीन युग में नंगे सिर रहना अपमान का विषय माना जाता था। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही इस नियम का पालन करते थे, विशेष रूप से अपने बड़ो को सम्मान देने के लिए यह आवश्यक माना जाता था। मुसलमान लोग प्रायः सफेद और गोल पगड़ी वाँधा करते थे। हिन्दू लोग रंगीन सीधा और ऊँचा उठा हुआ ही पगडी बाँधा करते थे। विभिन्न जातियों तथा विभिन्न प्रान्तों के लोग इसको अलग–अलग ढंग से ही बाँधते थे। धनी लोग पचीस से तीस गज लम्बा बढ़िया लिनेन की पगड़ी वाँधा करते थे और कुछ लोग एक किनारे पर थोड़ा सा काम करा दिया करते थे। उत्तरी भारत के कुछ भागों में जाड़े के दिनों में रूई भरी टोपी भी पहनी जाती थी। खास तौर से कश्मीर, पंजाव और आधुनिक उत्तर प्रदेश में इस तरह की टोपी पहनी जाती थी। कुलही वच्चों के सिर पर पहनायी जाती थी किन्तु कृष्ण भक्त कवियों ने वालक कृष्ण के साथ ही साथ युवा कृष्ण के सिर पर भी कुलही या कुलह, का उल्लेख किया है। सेहरा विवाह के समय या राजाओं के मुकुट के साथ ही वांधा जाता था। गजमोतियों के हार युक्त सेहरे का वर्णन अनेक कवियों ने किया है। सिर पर भी फेंटा वाँधने का उल्लेख कई कवियों ने किया है। कृष्णदास ने नव रंग का फेटा वाँधे हुए कृष्ण का वर्णन किया है। मुगल सम्राटों और उच्च वर्ग के लोगों में सुन्दर वहुमूल्य और अनेक प्रकार की पांगों को वांधने के लिए ऐतिहासिक उल्लेख भी मिलते है।[5]

मुगल समकालीन युग में खड़ाऊ के प्रचलन का वर्णन जायसी नाभादास, कवीरदास आदि ने किया है। ब्राह्मणों और साधुओं में इसका बहुत अधिक प्रचलन था। बड़े लोग भोजन के पहले तथा भोजन के बाद खड़ाऊ पहन कर पैर धोया करते थे। वर्नियर लिखते है कि इतनी गर्मी पड़ती थी कि अधिकांश लोग पैरो में कुछ नहीं पहनते थे। मोजा पहनने की चर्चा की जाती है। इस्टेवोरिनस लिखते है कि उस समय तुर्की ढंग के जूते पहने जाते थे जो इस गरम देश के मुगल लिए बहुत ही आराम देह माने जाते थे। मुगल कालीन युग में अपने कमरे की फर्श पर कारपेट का प्रयोग किया जाता था। और उस पर लोग जूता उतार कर चलते थे। थेवेनाट और मेन्डलस्लो लिखते है कि मुसलमान लोग नीचे झुका हुआ हिल का जूता पहनते थे लेकिन व्यापारी लोग उठा हुआ हिल का जूता पहनते थे। मेन्डलस्लों लिखते हैं कि लकड़ी के जूते लोग पहनते थे। मध्यम वर्गों के लोग लाल चमड़े के जूते पहनते थे। और धनी लोग जूतों पर सुनहला और रूपहला काम भी कराते थे। कुछ लोग स्पेनी चमड़े के जूते पहनते थे। शौकीन

लोग कई रंग के वेलवेट के जूते पहनते थे। इस तरह के जूते धनी वर्गों के लोग ही पहनते थे। शादी के मौके पर तरह–तरह से सजायें गये जूते पहने जाने का उल्लेख है।[6]

स्त्रियां बहुत तरह के कपड़े नहीं पहनती थी। गरीब स्त्रियां साड़ी और अंगिया पहनती थी। कभी–कभी साड़ियां दो या अधिक रंगो की होती थी। हिन्दू स्त्रियां लाल रंग अधिक पसन्द करती थी। उत्तरी भारत में कसूमल साड़ी का विशेष रूप से प्रचलन था जिसे कंसूभी या कुसुंभी भी कहा जाता था। कुसुम्भी सारी का वर्णन आलम आदि ने कई स्थानों पर किया है। जरी के काम की साड़ियों का प्रचलन विशेष रूप से उच्चवर्गीय महिलाओं में पाया जाता था। इस प्रकार की साड़ियों के लिए जरतारी सारी का उल्लेख रहीम नरोत्तमदास, कृपाराम, कृष्णदास आदि ने किया था। मुसलमान स्त्रियां घाघरा पहनती थी किन्तु लंहगा विशेष रूप से प्रचलित था। लहंगा कमर से ऐड़ी तक और कभी–कभी जांघो और घुटनों के कुछ नीचे तक लटकता हुआ घेरदार होता था।[7] जरी अर्थात सोने के तारों से चुने हुए लहंगो का प्रयोग राजघरानों में होता था। रेशम का वना हुआ भारी लहंगा विवाह में वर पक्ष की ओर से कन्या के लिए आता था इसे लहरपटोर कहा जाता था। मुसलमान स्त्रियां पायजामा और कमीज भी पहनती थी। कभी–कभी शलवार और आधे वाँह की कमीज पहनती थी। धनी स्त्रियां कश्मीरी ऊन के बने हुए काबा पहनती थी। कुछ स्त्रियां कश्मीरी शाल ओढ़ा करती थी। हिन्दू और मुसलमान दोनो ही स्त्रियां सिरों को डूपट्टो से ढका करती थी। मुसलमान स्त्रियां वाहर जाते समय सफेद वुर्का पहनती थी। हिन्दू, स्त्रियां अपने वालों को फूल और जेवरों से सजाती थी। धनी वर्गों की स्त्रियां पायजामें के ऊपर जेवर पहनती थी गरीब स्त्रियां नंगे पैर चलती थीं। धनी स्त्रियां जूते पहनती थी, जो लाल रंग के होते थे। राजघरानों की स्त्रियों की जूतियां विशेष रूप से कीमती होती थी। उनमें अनेको प्रकार के रत्न और मोती जड़कर एक विशेष प्रकार से अलंकरण किया जाता था। शाही वेगमों में इस प्रकार की अलंकृत जूतियों का विशेष रूप से प्रचलन था। गरीब लोग साबुन का इस्तेमाल नहीं करते थे। वह लोग आटा या हल्दी का चूर्ण, पीसा हुआ चावल, कुसुम फूल फूल इत्यादि को इस्तेमाल करते थे। बालों का रंगना भी इस समय बहुत ही अधिक प्रचलित था। साबुन पाउडर और क्रीम की जगह गसूल, अपतना और चंदन की लकड़ी का प्रयोग करते थे। साबुन प्राचीन काल से ही भारत वर्ष में प्रयोग किया जाता था। वांट के अनुसार साबुन बनाने की कला भारत वर्ष में बहुत प्राचीन काल से ही प्रचलित थी। बाबर के समय में साबुन या सवनी शब्द का प्रयोग भारतीय समाज में मिलता है।[8] आइन–ए–अकवरी में इस बात का उल्लेख मिलता है कि इत्र आधे रूपये तोला से लेकर के पचपन रूपया तोला तक मिलता था। सुगन्धित वस्तुओं में अटक सेवती, अरक–ए–चमेली, मोसेरी और अम्बरे आशन भिन्न–भिन्न प्रकार की सुगन्धित वस्तुयें अत्यधिक मात्रा में होती थी। नूरजहाँ की माँ ने गुलाव से एक नये तरह का इतर बनाया था जिसको इतर–ए–जहाँगीरी कहा जाता था बनारस इस सुगन्धित चीजे तैयार करने के लिए प्रसिद्ध माना जाता था। अत्यधिक सुगन्ध से युक्त तेल वगल से मगाकर बालों और वदन में लगाने की परम्परा थी। पान पुरूष और स्त्री दोनो ही प्रयोग करते थे और अपने होठों को लाल चमकीला बना लिया करते थ।

इससे स्वच्छ सांस निकलती थी और जवड़े भी मजबूत हो जाते थे। दांतो को साफ करने के लिए तरह–तरह के साधन प्रयोग में लाये जाते थे। मेन्डलस्लो लिखते है कि ''सौ वर्ष के बूढ़ो तक के दाँत टूटे नहीं होते थे।'' शीशे का प्रयोग किया जाता था। लकड़ी के कंघी का प्रयोग किया जाता था। जानवरों की सींग श्रृंगार करने के लिए प्रयोग में लायी जाती थी। बालों को एक कपड़े से सजाया जाता था जिसे हमाली कहा जाता है।[9] लोग नौजवान रहना और चमकीले तरह से रहना पसन्द करते थे। समहीता और नीकाया में इस वात की भी चर्चा मिलती है कि लोग प्रातः काल विस्तर से उठने के वाद दाँत साफ कर आँख और मुँह साफ कर नहाते और वदन साफ करते थे। शरीर पर तरह तरह की मालिश कर सुगन्धित चीजे प्रयोग में लायी जाती थी। अन्य चीजों में ब्रेसलेट का पहनना, टहलने के लिए छड़ी लेना, तलवार या बंदूक का प्रयोग करने की चर्चा मिलती हैं छाता, पगड़ी, पंखा, चौरी और कढ़ावदार सुसज्जित वस्त्र पहना जाता था। दाढ़ियों को छाटने की भी प्रथा प्रचलित थी। स्त्री और पुरुषो के लिए दिनचर्या आरम्भ करने से पहले नहाना आवश्यक समझा जाता था। हिन्दुओं के यहाँ यह एक धार्मिक कर्त्तव्य माना जाता था।[10] कि प्रातः काल एक नदी या तालाव में लोग नहायें। नहाने के वाद शरीर और पैरों को मलने की परम्परा थी। पूरे शरीर का मालिश किया जाता था और नहाने के लिए संदल का तेल, सुगन्धित वस्तुये, व्यापारी लोग अपने ग्राहकों को दिया करते थे। कंधे पर एक तौलिया लेकर, शीशा लेकर, नाई घूम–घम कर बाल काटते थे और इसके लिए एक या दो पैसा अपनी पगार के रूप में भी पाते थे। हिन्दुओं और मुसलमानों के दाढ़ी बनाने में बड़ा अन्तर था।[11] अधिकांश लोग दाढ़ी बनवाते थे। और थोड़े से लोग हल्की सी दाढ़ी रखते थे। धार्मिक मुसलमान लोग लम्बी दाढ़ियां रखा करते थे और कभी–कभी सीने तक दाढ़िया बढ़ जाया करती थी। हिन्दू और मुसलमान लोग मौछे भी रखते थे। हिन्दू लोग माथे पर तिलक लगातें थे। और एक धागा या जनेऊ भी पहनते थे। स्त्रियों के लिए श्रृंगार अत्यधिक आवश्यक मानी जाती थी। अबुल फजल ने आइन–ए–अकवरी में स्त्रियों के श्रृंगार में सोलह चीजों की चर्चा की हैं जिसमें नहाना शरीर में सुगन्धित चीजों का लगाना वालों, को रंगना और सजाना और तरह–तरह के मोती जवाहरात और सोने की चीजें पहनना सम्मिलित था।

राजपरिवारों में नहलाने का काम परिचारिकायें करती थी। स्नान के पहले शरीर पर चन्दन केसर, कस्तूरी, कपूर आदि का लेपन किया जाता था। केशों का कोमल कुटिल (घुघराला) अत्यधिक काला और लहरदार होना विशेष गुण माना जाता था। इसीलिए उनको वहुत तरह से अंलकृत और लुवसित किया जाता था। स्नान करने के पश्चात स्त्रियां विशेष रूप से बालों को खोलकर सुखाती थी। कोमल घुघराली लटों को तेल लगाकर कंघी से सवांरा जाता था। हिन्दू स्त्रियां अपने बालों का जूड़ा बनाती थी। और उसमें सोने का क्लिप लगाती थी। नकली वालो का भी प्रयोग करना प्रचलित था। लम्बे बाल खूबसूरती के चिन्ह माने जाते थे। हिन्दू स्त्रियां सिन्दूर भी लगाया करती थी और वालों को भी सजाती थी। बालों में जयाहारात की चीजे और फूल भी लगाये जाते थे। सिर के केश–राशि को

सम्भाग में विभक्त कर उसके मध्य सिन्दूर की रेखा लगाई जाने की प्रथा थी। मांग को सिन्दूर से सजाना सौभाग्यवती बहुओ के लिए अनिवार्य माना जाता है। गोरी स्त्रियों के मुख पर स्वाभाविक रूप से स्थित काला तिल सौन्दर्य वर्धक माना जाता था। किन्तु यदि स्वाभाविक तिल न हो तो उस समय की स्त्रियां श्रृंगार करते समय स्वयं काला तिल बना लिया करती थी। स्त्रियां काजल, अंजन और सुरमा भी लगाती थी। दांत और आँख को मिस्सी से काला किया जाता था। मिस्सी लगाने के लिए पान की छोटी वीड़ी या पीटि का भी प्रयोग किया जाता था। लगभग सम्पूर्ण मुगल काल में स्त्रियों के पैरों में महावर रचाने का विशेष रूप से प्रचलन था। काव्य ग्रन्थों में महावर और जावक लगाने के अनेक उल्लेख मिलते है। भारतीय स्त्रियां हाथों और पैरो को रंगने के लिए मेंहदी का भी प्रयोग करती थी। नाखून पालिश की जगह पर मेंहदी लगाई जाती थी। मुगल कालीन युग में प्रचलन के अनेक प्रमाण प्राप्त होते है। मेंहदी की पत्ती को पीसकर राधा के हाथ में सखियों द्वारा मेंहदी रचाये जाने का उल्लेख मीरा ने किया है। स्त्रियां लिपिस्टिक के जगह पर पानों से लाल करती थी। शरीर लज्जा में वस्त्रों के साथ ही साथ आभूषणो को भी हमेशा से प्रधानता दी जाती थी। आभूषण प्रियता के कारण शरीर के विभिन्न अंगों में पहने जाने वाले अनेको आभूषणों के निर्माण वहुत प्राचीन काल से होने लगा था। जिस प्रवृति ने महलों में वहुमूल्य रत्न जड़े जाने तथा तख्ताउस ऐसे वहुमूल्य सिंहासन के निर्माण की प्रेरणा दी। वही पर सौन्दर्य वृद्धि के लिए मानव शरीर को वहुमूल्य आभूषणो से सजाने की एक अच्छी परम्परा स्थापित करने में सहायक मानी गयी है। इस काल में प्रयुक्त होने वाले आभूषणों को हम दो वनों में वाँट सकते है। पुरुषों के आभूषण, स्त्रियों के आभूषण जो इस प्रकार है। पुरूष लोग स्त्रियों की भांति आभूषण नही पहनते थे। औरंगजेब को छोड़कर सभी मुगल शासक खास–खास मौके पर आभूषण पहनते थे। अबुल फजल ने लिखा है कि विहार में रायगढ़ के नजदीक पत्थर मिलते थे। जिससे जेवर बनाये जाते थे। हाथी दाँत के भी आभूषण वनाये जाते थे और मोती के भी ब्रेसलेट बनाये जाते थे। अबुल फजल लिखते है कि सोनारों को एक तोला पर चौसठ दाम मिलते थे। गुजराती हिन्दू, सोने और चाँदी के काम के लिए मशहूर माने जाते थे। सर टामस रो लिखते है कि जहाँगीर अपने जन्म दिन के अवसर पर अपने पूरे वदन को आभूषणों से सजाते थे। आभूषण प्राय सोने और चाँदी के वनते थे।सेमुअल परवाज ने ताँबा गिलास व अन्य चीजों के आभूषणों की चर्चा की है। राजा लोग रत्नों से जटित मुकुट से अपना मस्तक अलंकृत करते थे। तुलसी ने पुरूष के कानों में स्वर्णकिली और कर्णफूल का वर्णन किया है। हिन्दू लोग कानों और अंगुलियों में रिगं पहनते थे राजपूत लोग ब्रेसलेट और कानों में रिंग पहनना अपना गौरव का विषय मानते थे। पुरुष लोग गले में मणिमाल, मुक्ताहार टोडर नामक हार, दुलरी अर्थात दो लड़ों की मुक्तमाला, कुंठा अर्थात बीच में बड़े कंठे वाला हार पदिक स्वर्ण रचित मणि पदिक आदि पहनते थे। पुरुष लोग भुजाओं में केचुर, अंगद, आदि आभूषण पहनते थे। नाभादास और सूर ने भी इसका वर्णन किया है। तुलसी ने बहुमूल्य केचूर और कंकण की चर्चा की है।

भारत वर्ष में आभूषणों का हिन्दू और मुसलमानों के लिए धार्मिक महत्व भी था। भारतीय स्त्रियां भारी से भारी आभूषण पहनती थी। सभी यात्री इस बात का उल्लेख करते है कि आभूषण उनके प्रसन्नता का विषय था। स्त्रियां सभी चीजों का त्याग कर सकती थी लेकिन आभूषण को वह नहीं छोड़ सकती थी। विधवा होने पर आभूषणों का प्रयोग नहीं किया जाता था। स्त्रियां बचपन से ही आभूषणो का प्रयोग करती थी। बहुत कम अवस्था में नाक और कान छेद दिये जाते थे। सिर से पैर तक आभूषण पहनने की प्रथा थी। आइन–ए–अकबरी में सैतिस प्रकार के जेवरों के प्रयोगों के बारे में बताया गया है। मनुची के अनुसार उनके सिरों पर जेवर लटकता रहता था और बहुत तरह के जेवर शादी के अवसर पर या विशेष अवसर पर प्रयोग किये जाते थे। शीश फूल सिर पर पहनने वाला आभूषण होता था जो चमकते हुए हीरों से सजा हुआ नायिका के सिर पर ज्योति बिखेरता था। शीश फूल को ही सिर फूल या केशफूल की संज्ञा दी जाती है। केशो को सजाने के लिए मणियों से जड़ी हुई अनेको प्रकार की चोटियां प्रयोग में लायी जाती थी। उसमें लाल रत्नों की झालर लगी रहती थी। ललाट को अंलकृत करने के लिए स्त्रियां कई प्रकार के टीके पहनती थी। यह टीका जड़ाऊ भी होता था। विन्दी माथे पर लगाई जाती थी। विन्दी मोती जड़कर विशेष रूप से सुन्दर वनाया जाता था और एक साथ नव प्रकार के रत्न उसकी शोभा वढ़ाते थे। डा. वासुदेव शरण अग्रवाल, डा. अल्तेकर आदि विद्वानों का मत है कि नाक के नथ आदि आभूषणों का प्रयोग मध्यकालीन मुस्लिम सम्यता की देन मानी जाती है। नाक में आभूषण पहनने की प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित थी। काव्यों में नासिका में नथ की झलक और उसकी लोकोत्तर छवि की प्रशंसा की गई है। इसे सुहाग का चिन्ह माना जाता था।यह आकार में लुरकी अर्थात कान में पहनने वाली (बाली) के समान होता था। जो नाक के अथर पर डोलता हुआ दिखायी पड़ता था। उसमें मणि और मोती के नग जड़े रहते थे। मोती की जड़ाई मध्यभाग में की जाती थी। नथ का छोटा रूप ''नथुनी'' का भी उल्लेख किया गया है। नाक की पिन सोने या चाँदी की होती थी। सोने की पतली कील को ठोंक कर दांतो को अलंकृत किया जाता था। इसका प्रचलित नाम भेख बताया गया है।[12]

निष्कर्ष, मुगल काल में खूंट, खुटिला, खुभी, झुमका, कुंडल, कर्णफूल, ताटक, तरयौना, बाली, अखोटा, तखिनवाली, तरकी, बीरा, अवंतस आदि का वर्णन मिलता है। चाँदी या सोने के फूल के आकार का आभूषण कान में पहना जाता था। कान में कुण्डल भी पहना जाता था। जो सोने, चाँदी और तांवे के बने होते थे औन कान से लेकर कंधे तक लटकते रहते थे। अन्य कांनो में पहनने वाले आभूषणों में कर्णफूल (जो फूलकी शकल की होती थी) पहनते थे या बाली जिसमें मोतियां लगी होती थी कान में पहना जाता था, चम्पाकली भी कान में ही पहनते थे। बंगाली औरतें कान बाला जिसे चक्रावली कहते थे कान में पहनती थी। स्त्रियां गले में पहनने वाले आभूषण में हंस, गुलबन्द, हार, हँसुली, कण्ठमाली पहनती थी। गले में सोने और मोती के हार भी पहने जाते थे। कभी–कभी मोतियों से सजे हुए हार पहने जाते थे। हीरे के आभूषण स्त्रियां पहनती थी। आलोच्यकाल में हुमेल भी सोना, चाँदी और वहुमूल्य

धातुओं के रत्नों से बना रहता था। उस समय रत्नों से जड़े हुए स्वर्ण का चौकोर ठप्पा बनाकर उसे हार के बीच में गूंच कर पहना जाता था। इसी को चौकी कहा जाता है। ग्रामीण स्त्रियां आज भी हसुली पहनती है। जो अर्द्धचन्द्र या हसिये के आकार का होता था। स्त्रियां भुजाओं में बाजूबंद और टाडं दो भिन्न आभूषण पहनती थी। टांड रत्न जड़ित होता था जो सोने के छल्लों से वनाया जाता था। आलोच्यकाल के काव्य में कंकण, वलय, गजरा, पहुची, चूड़ी, कड़ा, कंगन आदि का वर्णन किया गया है। जायसी ने नीनगा ककंण का उल्लेख किया है जिसमें नौ प्रकार के रतन लगे रहते थे। चूड़ी स्त्रियों के सुहाग का प्रतीक माना जाता था। स्त्रियां कांच की चुड़ी पहनती थी। धनी घरों की स्त्रियां सोने की कचपची चुड़ियां पहनती थी। चुड़ियों की कोई निश्चित संख्या नहीं होती थीं स्त्रियां अपनी रूचि के अनुरूप संख्या में उन्हे पहनती थी। कृष्णदास ने हाथों में चार–चार चूड़ियों के शोभित होने का उल्लेख किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 जायसी, मलिक मुहममद– पद्मावत, सजीवनी व्याख्या, सम्पादक डा. वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 103
2 सेनापति कवित्त रत्नाकर, हिन्दी परिषद इलाहावाद द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण छंद 15 व्रजविलास, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 327
3 गुप्ता, टी०सी०दास– एसपेक्ट्स आफ बगांली सोसायटी, कलकत्ता, यूनिवर्सिटी, प्रकाशन, कलकत्ता 1935, पृष्ठ 5
4 ट्रेवेल्स इन इण्डिया इन दि सेवेन्टीन्थ सेन्चुरी, पूर्वोद्धृत, पृष्ठ 334; ए वायेज टू सूरत इन दि इयर,
5 आइन–ए–अकबरी, अंग्रेजी अनुवाद, भाग–3, पूर्वोद्धत पष्ठ 344; बंगाल इन दि सिक्सटीन्थ सेन्चुरी ए0डी0 एर्वोजल पाठ 184
6 गुप्ता, टी.सी. दास वंगाल इन दि सिक्सटीन्थ सेन्चुरी ए.डी. कलकत्ता यूनिवर्सिटी प्रकाशन, कलकत्ता, 1914, पृष्ठ 158
7 विन्सेन्ट ए० (1931). हिस्ट्री आफ फाइन आटर्स इन इण्डिया एण्ड सिलोन पृष्ठ 345

8 एस०आर० शर्मा, (1937). भारत में मुस्लिम शासन का इतिहास, आगरा पृष्ठ 123

9 शरण, परमात्मा (1941). स्टडीज इन मेडिवल इण्डियन हिस्ट्री दिल्ली; दि प्राविन्शियल गवर्नमेंट आफ दि मुगल्स इलाहावाद पृष्ठ 456

10 सरकार जदुनाथ (1925). चौतन्य की लाइफ एण्ड टीचिंगस, एस.सी. सरकार एण्ड सन्स कलकत्ता पृष्ठ 324;

11 सक्सेना, वनारसी प्रसाद (1974). मुगल सम्राट शाहजहाँ जयपुर पृष्ठ 177

12 श्रीराम शर्मा, (1951). मुगल गवर्नमेन्ट एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन, बम्बई पृष्ठ 187